इकाई–VIII

अध्याय–20

प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण

(Judicial Control Over Administration)

प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण से तात्पर्य है, न्यायपालिका द्वारा प्रशासन पर नियंत्रण किस प्रकार एवं किन उपायों द्वारा रखा जाता है। प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण की व्यवस्था उतनी ही आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण है जितनी कि प्रशासन पर विधायी नियंत्रण।

न्यायपालिका सरकार का तीसरा एवं महत्त्वपूर्ण अंग है जिसका कार्यक्षेत्र देश के कानूनों की व्याख्या करना और उन्हें भंग करने वालों को दण्ड की व्यवस्था करना है। लोक प्रशासन के सन्दर्भ में न्यायपालिका का प्रमुख उत्तरदायित्व नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना तथा प्रशासनिक अधिकारियों एवं कर्मचारियों को उनकी सीमाओं में बांधना है। संविधान एक ऐसे साध न को जन्म देता है, जिसके द्वारा अत्याचार, भ्रष्टाचार आदि दोनों पर प्रतिबन्ध लगाया जा सके। भारत में न्यायपालिका को सर्वोच्चता एवं स्वतंत्रता प्रदान की गई है। भारतीय न्याय व्यवस्था को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति से सुसज्जित किया गया है। भारतीय न्यायपालिका ब्रिटेन की भांति कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया पर कार्य करती है।

दूसरी ओर भारत में लोक कल्याणकारी राज्य के विकास ने यह आवश्यक बना दिया है कि नौकरशाही द्वारा की जाने वाली गलतियों, तथा शक्ति के दुरूपयोग को रोकने के लिए नये संरक्षणों की व्यवस्था की जाये। लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में विश्वास व प्रशासन पर नियंत्रण के लिए ''लोकपाल'' जैसी संस्थाओं को कायम किया गया है। लोकपाल के माध्यम से प्रशासनिक अधिकारियों एवं राजनीतिक कार्यपालिका पर नियंत्रण का प्रयास किया गया है।

न्यायपालिका सार्वजनिक अधिकारों की वैधानिकता को निश्चित करने का प्रयास करती है ताकि सभी नागरिक अपने अधिकारों व स्वतंत्रताओं का प्रयोग कर सके। जब भी सार्वजनिक अधिकारी सामान्य जनता के अधिकारों का अतिक्रमण करने लगता है तो न्यायपालिका उसकी रक्षक बन जाती है। इसकी एक बड़ी शर्त यह है कि न्यायालय अपनी इच्छा से प्रशासन के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करता, वे सत्ता के दुरूपयोग से नागरिकों को तब तक नहीं बचा सकते जब तक कोई भी व्यक्ति, समूह या संस्था न्यायालय में आवेदन पत्र देकर उससे इस आधार पर हस्तक्षेप करने की प्रार्थना न करे कि सरकारी अधिकारियों के किसी कार्य से उनके अधिकारों का हनन या अतिक्रमण हुआ है या होने की सम्भावना है।

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में कार्यपालिका देश के कानून के अनुसार शासन का संचालन करती है। न्यायपालिका का यह दायित्व है कि वह इस बात की लगातार देखभाल करती रहे कि इन कानूनों का पालन किस सीमा तक किया जा रहा है।

भारतीय संविधान में न्यायपालिका को कार्यपालिका से स्वतंत्र रखने की व्यवस्था की गई है। न्यायाधीशों की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा होती है किन्तु वे उसके द्वारा हटाये नहीं जा सकते। उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को संसद के दोनों सदनों की संयुक्त प्रार्थना पर ही हटाया जा सकता है। अतः न्यायपालिका भय रहित होकर अपने दायित्वों का निष्पादन करती है।

भारत के उच्चतम न्यायालय को परामर्शदात्री अधिकार भी सौंपे गये है। राष्ट्रपति किसी भी महत्त्वपूर्ण विषय पर उच्चतम न्यायालय से कानूनी परामर्श मांग सकता है। उच्चतम न्यायालय प्रत्येक विषय पर परामर्श देने के लिए बाध्य नहीं है। किसी विषय पर यह परामर्श देने से इनकार भी कर सकता है।

न्यायिक नियंत्रण के अवसर

जब किसी व्यक्ति, संस्था या समूह के अधिकारों का उल्लंघन होता है तो वह न्यायालय की शरण में जा सकता है। न्यायालय उस संस्था, व्यक्ति या सरकार को ऐसा करने से मना करेगा तथा उसके विरूद्ध दण्डात्मक कार्यवाही करता है। ये नियंत्रण के अवसर निम्न लिखित हैं :

(1) अधिकार–क्षेत्र का अभाव (Lack of Jurisdiction)

जब एक अधिकारी अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य करता है तो प्रभावित व्यक्ति उसके विरूद्ध न्यायालय में अपील कर सकता है। प्रत्येक अधिकारी को कुछ विशेष क्षेत्र में कुछ निश्चित शक्तियाँ प्राप्त होती हैं। यदि वह इससे बाहर कार्य करेगा तो उसके अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण माना जायेगा तथा उसके कार्य प्रभावहीन रहेंगे। अधिकार क्षेत्र के बाहर के कार्यों में प्रायः

तथ्यों की गलत व्याख्या की जाती है और परिस्थितियों को गलत रूप में समझा जाता है। न्यायालय का कार्य है कि वह सही व्याख्या प्रस्तुत करें।

(2) पद का अनुचित प्रयोग (Abuse of Power)

जब कोई अधिकारी अपने पद का प्रयोग किसी व्यक्तिगत कारण के लिए दूसरे व्यक्ति को हानि पहुंचाने के लिए करता है तो यह उसके पद व विवेक का दुरूपयोग कहा जायेगा। इस प्रकार के मामलों को प्रमाणित करना अत्यन्त कठिन होता है किन्तु यह न्यायिक जांच के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है। इसमें एक अधिकारी बदले की भावना से प्रेरित होकर कार्य करता है। ऐसी स्थिति में प्रभावित व्यक्ति न्यायालय की शरण में जा सकता है। अतः न्यायालय प्रशासन की जांच व नियंत्रण का कार्य सम्भाल लेता है।

(3) वैधानिक त्रुटि (Error of Law)

जब किसी अधिकारी को कानून का पालन करने के लिए शक्ति दी जाती है तो वह नागरिकों पर ऐसे उत्तरदायित्व लाद देता है जो वास्तव में उस सीमा से बाहर होते हैं। अतः न्यायालय कानून की गलत व्याख्या रोकने के लिए कार्यवाही करता है।

(4) तथ्यों का पता लगाने में त्रुटि (Error in Fact finding)

यदि कोई सरकारी अधिकारी अपने किसी प्रशासनिक कार्य में तथ्यों का अच्छी तरह से पता लगाये बिना किसी नागरिक को उसे हानि पहुंचाने वाला आदेश देता है तो नागरिक अपने अधिकार की रक्षा के लिए न्यायालय की सहायता ले सकता है जैसे स्वास्थ्य निरीक्षक किसी पशु के बारे में यह आदेश देता है कि यह बीमार है इसलिए इसे मार दिया जाये। यहां तथ्य सम्बन्धी प्रश्न उठता है कि क्या पशु वास्तव में बीमार है और यदि बीमार भी है तो जन स्वास्थ्य की दृष्टि से उसे मार देना चाहिये या नहीं। यदि पशु का मालिक यह अनुभव करे कि पशु बीमार नहीं है तो वह स्वास्थ्य निरीक्षक के विरूद्ध न्यायालय में न्याय हेतु जा सकता है।

(5) प्रक्रिया सम्बन्धी त्रुटि (Error of Procedure)

न्यायालय को यह अधिकार प्राप्त है कि वे इस बात को भी देखें कि सरकारी अधिकारी शासन करते समय सारे कार्य करें। यदि कार्यालय का अभिलेख यह प्रदर्शित करे कि प्रक्रिया में गलती की गई है या कुछ छोड़ा गया है तो न्यायपालिका उस प्रशासनिक कार्य को गैर कानूनी घोषित कर सकती है। उचित प्रक्रिया का उत्तरदायित्व सरकार के लिए आवश्यक माना जाता है। इसके अभाव में अनेक समस्याएं उजागर हो सकती है।

न्यायिक नियंत्रण के साधन या प्रणालियाँ

प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण कई तरीकों से होते हैं। इनका प्रयोग करने की शक्तियाँ कुछ सीमा तक संविधान तथा व्यवस्थापिका के कानूनों द्वारा प्राप्त होती है। न्यायपालिका द्वारा अधिकारियों की स्वेच्छा के विरूद्ध भी नागरिकों की रक्षा की जाती है। प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण प्रायः निम्न तरीकों से स्थापित किया जाता है :

(1) कार्यपालिका के व्यवस्थापन को असंवैधानिक घोषित करना

(By Declaring Legislation Unconstitutional)

भारत में हस्तान्तरित व्यवस्थापन की प्रक्रिया के अधीन भी कार्यपालिका कुछ कानून बनाती है। संविधान की धारा 123 व 213 राष्ट्रपति तथा राज्यपालों को संसद व राज्यों की व्यवस्थापिकाओं के अवसान काल में अध्यादेश जारी करने का अधिकार है। यदि कार्यपालिका द्वारा किया गया यह व्यवस्थापन संविधान सम्मत नहीं है तो न्यायपालिका उसे गैर–कानूनी घोषित कर सकती है।

(2) कानूनी शक्तियों का प्रयोग–प्रत्यायोजित विधान

(Use of Judicial Powers- Delegation of Legislation)

भारत में न्यायालयों को यह शक्ति दी गई है कि वे प्रत्यायोजित विधायी शक्ति के किसी प्रश्न के सम्बन्ध में यह निर्धारित करे कि प्रत्यायोजन के लिए कानूनी सत्ता थी अथवा नहीं या जो व्यवस्थापन किया है वह कानूनी सीमा में आता है अथवा नहीं। सिद्धान्त के अनुसार मूल व्यवस्थापन का कार्य प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता, केवल कम महत्व का व्यवस्थापन किया जा सकता है। भारत के उच्चतम न्यायालय ने प्रत्यायोजित सत्ता के अधीन बनाये गये नियमों की जांच के लिए मापदण्ड निर्धारित किये हैं। यदि नियम इन मापदण्डों पर खरा उतरता है तो उचित है अन्यथा नहीं। अतः किसी भी नियम को इस आधार पर चुनौती दी जा सकती है कि वह प्रत्यायोजित सत्ता के अधीन नहीं आता।

(3) प्रशासकीय निर्णय के विरूद्ध अपीलें (Appeals of Administrative Decisions)

न्यायालय समय–समय पर प्रशासनिक सत्ता के निर्णयों के विरूद्ध अपीलें सुनते रहते हैं। न्यायिक नियंत्रण का

तरीका केवल वहीं अपनाया जाता है जहां कानून द्वारा इस प्रकार की अपील करने का अधिकार है। कानूनी व्याख्या से सम्बन्धित प्रश्नों में अपील की यह सुविधा प्रदान की जाती है।

(4) करारोपण के विरूद्ध अपील (Appel againt Taxation)

कार्यपालिका को यह अधिकार प्राप्त है कि सार्वजनिक कार्यों को सम्पन्न करने के लिए करों के माध्यम से वित्त की व्यवस्था करे। वही कर एकत्रित किया जा सकता है जो कानून सम्मत हो। संविधान के अनुच्छेद 265 के अनुसार कानून की सत्ता के अतिरिक्त न तो कोई कर लगाया जाये और न ही एकत्रित किया जाये। यदि कोई सरकार गैर कानूनी ढंग से कर एकत्रित करती है तो न्यायालय उसकी वैधता की जांच कर सकता है।

(5) सरकार विरोधी अभियोग (Allegations against Government)

नागरिकों को स्वतंत्रता व अधिकार संविधान द्वारा दिये जाते हैं। संविधान ही इनकी रक्षा के लिए उत्तरदायी हैं। इनकी रक्षा के लिए राज्य के विरूद्ध भी न्यायालय में अभियोग लगाया जा सकता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 300 में कहा गया है कि भारतीय सरकार द्वारा अथवा उसके विरूद्ध अभियोग प्रस्तुत किया जा सकता है।

(6) सरकारी अधिकारी विरोधी अभियोग (Allegations against Government Officers)

समस्त सरकारी अधिकारी अपने कार्यों के लिए न्यायालय के प्रति उत्तरदायी हैं। प्रशासन से किसी भी प्रकार की शिकायत होने पर कोई भी नागरिक न्यायालय की शरण ले सकता है। राज्य सरकार एवं संघ सरकार के मंत्रियों के विरूद्ध साधारण नागरिक की भांति कार्यवाही की जा सकती है। लेकिन भारतीय संविधान राष्ट्रपति एवं राज्यपालों को न्यायिक कार्यवाही से उन्मुक्ति प्रदान करता है। राष्ट्रपति को उसके कार्यकाल में बन्दी नहीं बनाया जा सकता और न ही कारावास का दण्ड दिया जा सकता।

असाधारण उपचार (Extraordinary Remedies)

न्यायपालिका द्वारा प्रशासन पर नियंत्रण रखने के लिए विभिन्न प्रकार के लेख जारी किये जाते हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 32(2) के अनुसार उच्चतम न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि वह नागरिकों के अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं की रक्षा के लिए आवश्यक आदेश, निर्देश तथा लेख निकाल सकती है। अनुच्छेद 226 के अनुसार उच्च न्यायालयों को भी इसी प्रकार की शक्तियां दी गई है।

इन असाधारण उपचारों का इतिहास काफी लम्बा है जिन्हें ब्रिटेन के संवैधानिक इतिहास में देखा जा सकता है। इन उपचारों को असाधारण इसलिए कहा जाता है कि बन्दी प्रत्यक्षीकरण को छोड़कर अन्य सभी लेख न्यायालय द्वारा किसी के अधिकारों के रूप में नहीं वरन् उसकी स्वेच्छा से प्रसारित किये जाते हैं और वहीं प्रसारित किये जाते हैं जहां अन्य उपचार अपर्याप्त सिद्ध हों।

प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण के इन विभिन्न लेखों का संक्षिप्त उल्लेख इस प्रकार है :

(1) बन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus)

लेटिन भाषा के इस शब्द का अर्थ है, सशरीर रूप में उपस्थित होना। इस लेख के अनुसार ऐसे व्यक्ति को आज्ञा देना है जिसने किसी अन्य व्यक्ति को बन्दी बना रखा है। उस व्यक्ति को यह आज्ञा देना है कि बन्दी बनाये गये व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया जाये। इसका प्रमुख लक्ष्य गैर कानूनी रूप से बन्दी बनाये गये व्यक्ति को स्वतंत्र कराना है। इसके माध्यम से बन्दी बनाये गये व्यक्ति को तुरन्त न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता है तथा बन्दी बनाये जाने की वैधता की जांच करता है। इस लेख का प्रमुख उद्देश्य गैर–कानूनी रूप से बन्दी बनाये जाने की परम्परा पर रोक लगाना है।

(2) परमादेश (Mandamus)

इस लेख का शाब्दिक अर्थ है कि आज्ञा देना। यह एक ऐसा लेख होता है जो सरकारी अधिकारियों के लिए प्रसारित किया जाता है। इसके द्वारा उस अधिकारी को यह आज्ञा दी जाती है कि वे उन कर्तव्यों का पालन करे जिनको उन्होंने अब तक भुला दिया है। यह लेख न्यायालय द्वारा स्वेच्छा से प्रसारित किया जाता है। इस लेख द्वारा न्यायालय सरकारी अधिकारी को किसी न किसी प्रकार से कार्य करने के लिए बाध्य कर सकता है।

(3) प्रतिषेध (Prohibition)

यह लेख उच्च स्तरीय न्यायालय द्वारा नीचे के न्यायालय को जारी किया जाता है। इसका उद्देश्य नीचे के न्यायालय को ऐसा कार्य करने से रोकना है जो उसे कानूनी रूप से मिला हुआ नहीं है। यह लेख उच्च न्यायालय द्वारा छोटी अदालतों को उस समय जारी किया जाता है जब वे अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य करती हैं। यह लेख अधिनस्थ न्यायालयों को विवादपूर्ण विषयों पर विचार करने से रोकता है।

(4) उत्प्रेषण लेख (Certiorari)

इसका शाब्दिक अर्थ है, प्रमाणित होना या निश्चित होना। यह एक ऐसा लेख है जो किसी उच्च न्यायालय द्वारा निम्न अभिलेख न्यायालय या अन्य न्याय कार्य करने वाले अभिकरण या अधिकारी को प्रसारित किया जाता है। उत्प्रेषण लेख द्वारा बडा न्यायालय छोटे न्यायालय से सभी प्रकार के रिकार्ड इस बात की जांच पड़ताल के लिए मंगवा सकता है कि अधीनस्थ न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य तो नहीं कर रहा है। इस लेख को प्रायः न्यायिक कार्य के विरूद्ध ही प्रसारित किया जाता है। इस आधार पर छोटी अदालत का निर्णय रूक जाता है अथवा खण्डित हो जाता है।

(5) अधिकार पृच्छा (Quo Warranto)

अधिकार पृच्छा लेख द्वारा कोई व्यक्ति यदि गैर–कानूनी रूप से किसी पद या अधिकार का प्रयोग करता है तो न्यायालय उसे ऐसा करने से रोक सकता है। किसी भी कार्य की वैधानिकता की जांच के लिए इस प्रकार का लेख विशेष परिस्थितियों में प्रसारित किया जाता है जिसके सम्बन्ध में यह लेख जारी किया जाता है कि वह सरकारी होना चाहिए, यह किसी व्यक्तिगत या गैर सरकारी कार्यालय के विरूद्ध प्रसारित नहीं किया जा सकता।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि भारतीय प्रशासन पर नियंत्रण के लिए संविधान में साधारण एवं असाधारण उपायों का प्रावधान किया गया है। जिन न्यायिक उपायों का प्रयोग प्रशासन पर नियंत्रण के लिए किया गया है वे निश्चित ही कारगर व स्थाई है। इन उपायों की उपयोगिता अपने आप में निर्विवाद रूप से सिद्ध है। भारतीय लोकतंत्र की रक्षा व नागरिकों के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए इन उपायों को अपनाया जाना आदर्श न्याय व्यवस्था का उदाहरण है।

भारत में न्यायपालिका के आधुनिक आयाम (New Horizons in the Indian Judiciary)

पिछले कुछ दशकों में उच्चतम न्यायालय के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन आ रहा है और वह एक अनुदारवादी न्यायालय के स्थान पर प्रगतिशील दृष्टिकोण वाले न्यायालय का रूप ग्रहण करता जा रहा है। वह व्यक्तिगत हितों के संरक्षण के साथ–साथ सामाजिक हित के संरक्षक के रूप में सक्रिय भूमिका का निर्वाह करने लगा है।

संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन न्याय पाने का अधिकार उसी व्यक्ति को है जिसके मूल अधिकारों का अतिक्रमण होता है। लेकिन उच्चतम न्यायालय ने अपने नवीनतम निर्णय में अनुच्छेद 32 को विस्तृत कर दिया है।

जनहित याचिका (Public Interest Litigration - PIL) :

जनहित याचिका वह प्रक्रिया है जिसके तहत गरीब व असहाय लोगों, जो कि सामाजिक अयोग्यता, गरीबी तथा अज्ञानता के कारण अपने अधिकारों के लिए अदालत के सामने नहीं जा पाते, उनकी तरफ से किसी भी जन प्रतिनिधि अथवा सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा अदालत में उनके अधिकारों को रखा जाता है। यह आवश्यक नहीं कि जनहित याचिका वकील के माध्यम से विधिक प्रक्रिया अनुसार ही न्यायालय के समक्ष रखी जावे। न्यायालय साधारण पोस्टकार्ड व समाचारपत्रों की सूचना को भी जनहित याचिका के तहत स्वीकार कर सकता है।

जनहित याचिका के लिए यह आवश्यक है कि इसमें याचिकाकर्ता का निजी हित या स्वार्थ नहीं होना चाहिये अपितु सार्वजनिक हित निहित होना चाहिये चाहे स्वयं उस मामले में भुक्तभोगी नहीं हो। उच्चतम न्यायालय के द्वारा हाल ही में कुछ ऐसे मामलों को प्रकाश में लाया गया है जो जनहित याचिकाओं से जुड़े हुए हैं।

जैसे :– आगरा प्रोटेक्शन होम केस

आगरा प्रोटेक्शन होम में लगभग 70–80 लड़कियां रहती थी इन लड़कियों के बारे में इण्डियन एक्सप्रेस अखबार में यह खबर छपी कि आवासगृह में उनके साथ मानवीय व्यवहार नहीं हो रहा है। इन लड़कियों को रहने व कार्य करने के लिए मानवोचित परिस्थितियां प्रदान नहीं की गई हैं। यहां तक कि उनके लिए स्नानघर नहीं है और शौचालय भी बिना दरवाजे के हैं। न्यायालय ने इण्डियन एक्सप्रेस की खबर को जनहित याचिका माना। इन लड़कियों के लिए यह सम्भव नहीं था कि वे अपने अधिकारों के लिए न्यायालय में जा सकें, चूंकि वे सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से अलाभकर स्थिति में थी। ऐसी परिस्थिति में सर्वोच्च न्यायालय ने कानून के दो प्रोफेसरों को इन लड़कियों की ओर से पैरवी करने की स्वीकृति प्रदान की।

जनहित याचिका का दूसरा उदाहरण बिहार के भागलपुर जेल के विचाराधीन कैदियों का मामला था जो एक अखबार में छपी खबर के बाद प्रकाश में आया था। इस मामले की शुरूआत पुलिस आयोग के सदस्य के. एफ. रूस्तमजी द्वारा इण्डियन एक्सप्रेस में लिखे एक लेख से हुई। इस लेख में उन्होंने लिखा कि बिहार की जेलों में सैकड़ों कैदी सड़ रहे हैं। उनके मामले वर्षों से विचाराधीन हैं। लेख में ऐसे सात कैदियों के नाम दिये थे जिन्हें जेल में पांच साल से भी अधिक समय हो गया था और उन पर अभी तक मुकदमा प्रारम्भ नहीं हुआ था। इस खबर के आधार पर एडवोकेट श्रीमती हिंगोरानी ने संविधान के अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर की। प्रेस की खबर के आधार पर

उन्होंने ऐसे सात कैदियों के नाम का उल्लेख याचिका में किया था यचिका में यह भी कहा गया था कि ऐसे सैंकड़ों कैदी और हैं जो वषों से बिहार की जेलों में बन्द हैं और न ही उनके मामले की सुनवाई प्रारम्भ की गई है।

इस याचिका के आधार पर भारत का सर्वोच्च न्यायालय सक्रिय हो गया और अपनी न्यायिक सक्रियता का परिचय दिया। न्यायालय ने बिहार सरकार को नोटिस जारी कर दिया और उससे पूछा कि वह उन कैदियों की सूची मय हलफनामे के उच्चतम न्यायालय में प्रस्तुत करें जिनके मामले वर्षों से विचाराधीन है तथा जिनका जेलों में बन्द 18 महिनों से अधिक का समय व्यतीत हो चुका है। बिहार सरकार ने जब हलफनामा प्रस्तुत किया तो ऐसे कैदियों की संख्या हजारों थी। सर्वोच्च न्यायालय ने इस याचिका के माध्यम से हजारों कैदियों को मुक्त किया।

अतः उपर्युक्त अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जनहित याचिकाओं का भारतीय परिवेश में विशिष्ट महत्व है क्योंकि भारत की अधिकांश जनता अशिक्षित, गरीब व कानून की जानकारी नहीं रखती। इसलिए जनहित याचिकाओं के माध्यम से जनता के सार्वजनिक हितों की रक्षा की जा सकती है।

न्यायिक सक्रियता और उसका बदलता स्वरूप

(Judicial Activism And Its Changing Nature)

न्यायिक सक्रियता से तात्पर्य है कि न्यायपालिका की सक्रियता को न्यायिक सक्रियतावाद कहा जाता है। जब सर्वोच्च न्यायालय किसी ऐसे सार्वजनिक मामले की सुनवाई स्वयं आगे बढ़कर करे जिसका आधार समाचारपत्रों की सूचना, लेख या पोस्टकार्ड आदि की सूचना को आधार मानकर कर करता है, न्यायिक सक्रियता कहलाता है। न्यायिक सक्रियता के अन्तर्गत ऐसे मामलों का निपटारा किया जाता है जो जनहित एवं सामाजिक कल्याण से जुड़े हों एवं उनका हल पारम्परिक न्यायिक प्रक्रिया के अन्तर्गत हो पाना असम्भव हो। न्यायालय ऐसे मामलों की व्याख्या करता है तथा उनका पक्ष लेता है, इसके लिए यह भी आवश्यक नहीं है कि न्यायालय ऐसे मामलों में पारम्परिक न्याय प्रक्रिया तथा पूर्व निर्धारित नियमों का ही पालन करें।

न्यायिक नियंत्रण की सीमाएं (Limitations of Judicial control) :

भारत में न्यायपालिका का स्थान उत्तम है वह अपनी निष्पक्ष कार्यप्रणाली के द्वारा जनमानस पर अमिट छाप छोड़ती है। भारत में न्यायपालिका एक ऐसे मुकाम पर पहुंच चुकी है जो न्याय प्रणाली के साथ–साथ आर्थिक–सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत के रूप में हमारे सामने उपस्थित है। भारतीय न्याय प्रणाली में यह सारी उपयोगी विशेषताएं होते हुए भी कुछ ऐसी कमियां हैं जो सम्पूर्ण न्याय प्रणाली को बोझिल बनाती हैं जो निम्न हैं :–

(1) स्वयं पहल नहीं करती (Does not take initiative)

भारतीय न्याय प्रणाली की यह एक विशेषता कही जायेगी कि वह किसी भी मुकदमे की सुनवाई के लिए स्वयं पहल नहीं करती है अर्थात् भारतीय न्यायालय किसी भी वाद या मुकदमे को तब तक नहीं सुनते हैं जब तक कि उसे वादी या परिवादी या किसी तीसरे पक्ष द्वारा न्यायालय के समक्ष नहीं लाया जाता। न्यायालय किसी मुकदमे की सुनवाई तभी करते हैं जब वादी, प्रतिवादी या तीसरे पक्ष द्वारा उसके समक्ष लाया जाता है। अतः यह ठीक ही कहा गया है कि भारतीय अदालतें मुकदमे की सुनवाई के लिए स्वयं पहल नहीं करती है।

(2) अत्यधिक खर्चीली (Much Expensive) :

भारतीय न्याय प्रणाली की दूसरी प्रमुख सीमा यह मानी जाती है कि यह अत्यधिक खर्चीली है। न्यायालय में वाद दायर करने के लिए एक परम्परागत एवं वैधानिक विधिक प्रणाली को अपनाया जाता है जिसमें अत्यधिक धन खर्च होता है। वादी व प्रतिवादी के लिए यह आवश्यक है कि वह निर्धारित प्रक्रिया के द्वारा एडवोकेट के माध्यम से न्यायालय में वाद दायर करें। वादी प्रतिवादी को एडवोकेट करने के लिए हजारों रूपये फीस चुकानी पड़ती है जो साधारण नागरिक के बूते के बाहर की बात है। अतः भारतीय न्याय प्रणाली अत्यधिक खर्चीली है।

(3) विलम्बकारी (Delaying)

भारतीय न्याय प्रणाली की तीसरी प्रमुख सीमा यह मानी जा सकती है कि यह विलम्बकारी है क्योंकि भारत के नागरिक मुकदमों का फैसला लम्बे समय तक नहीं कर पाते। कई मुकदमों में इतना विलम्ब हो जाता है कि वादी व प्रतिवादी की मृत्यु तक हो जाती है। कुछ मुकदमों में इतना विलम्ब हो जाता है कि फैसला होने तक उसकी उपयोगिता स्वयं समाप्त हो जाती है। जैसे तलाक के मुकदमे इतने लम्बे चलते हैं कि पक्षकारों की विवाह की आयु ही निकल जाती है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण का अर्थ :– इसका अर्थ यह है कि न्यायपालिका द्वारा प्रशासन के उन कार्यों को रोकना है जो संविधान तथा कानून के विपरीत होते हैं उनका उल्लंघन करने वालों को दण्डित करने का कार्य करते हैं।
- न्यायिक नियंत्रण के अवसर :– न्यायपालिका निम्न स्थितियों में हस्तक्षेप कर सकती है :– (1) अधिकार क्षेत्र का अभाव (2) विवेक का अनुचित प्रयोग (3) सांविधानिक त्रुटि (4) तथ्यों का पता लगाने में त्रुटि (5) प्रक्रिया सम्बन्धी त्रुटि
- प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण स्थापित करने के सामान्य तरीके :– (1) कार्यपालिका के व्यवस्थापन को असंवैधानिक घोषित करना (2) कानूनी शक्तियों का प्रयोग – प्रत्यायोजित विधान (3) प्रशासकीय सत्ता के विरूद्ध अपीलें (4) करारोपण (5) सरकार विरोधी अभियोग (6) सरकारी अधिकारी विरोधी अभियोग।
- असाधारण उपचार :– बन्दी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, उत्प्रेषण लेख, अधिकार पृच्छा एवं प्रतिषेध
- न्यायिक नियंत्रण की सीमाएं :– स्वयं पहल नहीं करती, अत्यधिक खर्चीली, विलम्बकारी।
- जनहित याचिका से तात्पर्य :– जब न्यायालय किसी सार्वजनिक हित के महत्त्व के प्रश्न पर प्रसंज्ञान लेते हुए उसे सुनवाई के लिए मंगवाता है उसे जनहित याचिका कहा जाता है। जनहित याचिका में शिकायतकर्ता साधारण कागज पर सूचना लिखकर न्यायालय में भेज सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. प्रशासन के कार्यों को अवैध घोषित करने का अधिकार है :
   (अ) न्यायपालिका को (ब) कार्यपालिका को
   (स) व्यवस्थापिका को (द) राष्ट्रपति को ( )
2. असाधारण उपचार का अधिकार न्यायालयों को संविधान के कौनसे अनुच्छेद में दिया गया है ?
   (अ) 360 (ब) 32
   (स) 45 (द) 356 ( )
3. यदि किसी को बन्दी बनाया गया हो तो न्यायालय कौनसा उपचार करता है ?
   (अ) परमादेश (ब) निषेध
   (स) बन्दी प्रत्यक्षीकरण (द) उत्प्रेषण लेख ( )
4. प्रतिषेध लेख जारी किया जाता है :
   (अ) न्यायालय के लिए (ब) संसद के लिए
   (स) राष्ट्रपति के लिए (द) मंत्रिमण्डल के लिए ( )
5. परमादेश का शाब्दिक अर्थ है :
   (अ) प्रवेश देना (ब) आज्ञा देना
   (स) मना करना (द) जारी रखना ( )

अति–लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. न्यायिक नियंत्रण क्यों आवश्यक है ?
2. प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण के लिए अधिकृत कौन है ?
3. अधिकार क्षेत्र के अभाव से क्या तात्पर्य है ?
4. प्रक्रिया सम्बन्धी त्रुटि से क्या अर्थ है ?
5. अधिकार पृच्छा का प्रयोग कब किया जाता है ?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. विवेक के अनुचित प्रयोग का आशय स्पष्ट करें।
2. बन्दी प्रत्यक्षीकरण का प्रयोग कब किया जाता है?

3. प्रतिषेध लेख का संक्षिप्त वर्णन कीजिये।
4. न्यायिक नियंत्रण के साधारण व असाधारण उपायों में क्या अन्तर है ?
5. न्यायपालिका का वैधानिक त्रुटि से क्या आशय है ?
6. जनहित याचिका का अर्थ स्पष्ट करें।
7. न्यायिक सक्रियता का क्या आशय है ?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. उन अवसरों का उल्लेख कीजिए जब न्यायपालिका को प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित करने का अवसर मिलता है।
2. उन साधारण तरीकों का उल्लेख कीजिए जो न्यायालय प्रशासन पर नियंत्रण हेतु अपनाता है।
3. प्रशासन पर नियंत्रण के असाधारण तरीकों का उल्लेख कीजिए।
4. जनहित याचिका का विस्तार से वर्णन करें।
5. न्यायिक सक्रियता का अर्थ स्पष्ट करते हुए विस्तार से वर्णन करें।

उत्तरमाला

1. अ 2. ब 3. स 4. अ 5. ब